द्वितीय अध्याय: हिंदी कथा साहित्य में कश्मीर

i. हिंदी उपन्यासों में कश्मीर

ii. हिंदी कहानियों में कश्मीर

हिंदी कथा साहित्य में कश्मीर

i. हिंदी उपन्यासों में कश्मीर:

उपन्यास विधा का जन्म आधुनिक युग में हुआ है। जीवन की बढ़ती जटिलताओं और उलझनों के बीच उपन्यास ने एक सशक्त माध्यम के रूप में मानव-मन एवं जीवन की जटिलताओं, अंतर्द्वंदों और समस्यायों की अभिव्यक्ति हेतु एक विस्तृत फलक प्रदान किया है। रैल्फ फॉक्स उपन्यास विधा के संबंध में लिखते हैं, "उपन्यास केवलमात्र कथात्मक गद्य नहीं है, वह मानव के जीवन का गद्य है— ऐसी पहली कला है, जो सम्पूर्ण मानव को लेकर उसे अभिव्यक्ति प्रदान करने की चेष्टा करती है।"[1] अत: 'मानव के जीवन के गद्य' में जीवन के सभी आयामों के साथ उसकी समस्याओं को स्थान मिलना स्वाभाविक है। इस दृष्टि से देखें तो कश्मीरी-जीवन एवं उसकी समस्याओं के चित्रण से हिंदी उपन्यास अछूता नहीं है।

1980 के पूर्व प्रकाशित हिंदी उपन्यासों में कश्मीर-

'काश्मीर पतन':

कश्मीर के इतिहास और आम जीवन को आधार बनाकर हिंदी उपन्यास लिखने की परंपरा 1980 के पूर्व भी दिखती है। इस क्रम में प्राप्त सूचना के आधार पर कश्मीर पर सन् 1907 ई. में प्रकाशित जयाराम दास गुप्त का उपन्यास 'काश्मीर पतन' मिलता है। डॉ. रामचंद्र तिवारी इस उपन्यास के संबंध में लिखते हैं, "काश्मीर पतन में रणजीत सिंह द्वारा 1818 ई. में काश्मीर पर जय प्राप्त करने के बाद उसकी हीनावस्था का चित्रण किया गया है। इसे अच्छे ऐतिहासिक उपन्यासों की कोटी में रखा जाता है।"[2]

'पत्थर अलपत्थर':

उपेन्द्रनाथ अश्क का उपन्यास 'पत्थर अलपत्थर' सन् 1957 ई. में प्रकाशित है। इस उपन्यास

के केंद्र में एक गरीब घोड़वान हसनदीन है, जिसका एकमात्र आर्थिक आधार पर्यटक है। इन्द्रनाथ मदान इस उपन्यास के संबंध में लिखते हैं, "हसनदीन के द्वारा अश्क कश्मीरी मजदूरों के जीवन संघर्ष को, उनकी गरीबी और मजदूरी को, उनके जी-तोड़ परिश्रम को, उनके अत्यन्त घृणित शोषण को चित्रित करना चाहते हैं।...जो लोग कहानीकारों की कृपा से कश्मीर को केवल विलास और रोमांस का क्षेत्र मानते आए हैं, वे हसनदीन के जीवन की कटुता से अवश्य अभिभूत होंगे और कश्मीरी जीवन का एक नया पहलू उनके सामने खुलेगा।"[3] इस उपन्यास में हसनदीन के माध्यम से कश्मीरियों की गरीबी और मज़बूरी तथा खन्ना साहब के माध्यम से पर्यटकों की असंवेदनशीलता का चित्रण किया गया है। हसनदीन थोड़ी-सी बख्शीश की उम्मीद में खन्ना साहब की अतिरिक्त सेवा करता है, उनके सभी काम करता है लेकिन खन्ना साहब अंत में उसपर अपने कैमरे के स्टैंड खोने का आरोप लगाकर उसे पूरे पैसे भी नहीं देते हैं। उपन्यास का अंत हसनदीन जैसे लोगों की बेबसी और उनके प्रति पर्यटकों की बेरुखी और असंवेदनशीलता के साथ होता है।

'कश्मीर की धरती':

क्षेम लता वखलू का उपन्यास 'कश्मीर की धरती' सन् 1969 ई, में प्रकाशित हुआ है। इस उपन्यास का केन्द्रीय चरित्र रहमान है जिसके माध्यम से राजनैतिक भ्रष्टाचार को उजागर किया गया है। उपन्यास का पात्र रहमान कश्मीरी मुसलमान है, समाज और राजनीति में व्याप्त असामानता और भेदभाव के खिलाफ़ संघर्ष करता है। इस संघर्ष के दौरान वह इतना लोकप्रिय हो जाता है कि कश्मीर का मुख्यमंत्री बन जाता है, लेकिन राजनीति में बढ़ते जिस भ्रष्टाचार और अवसरवाद की नीति का उसने विरोध किया था, पद और प्रतिष्ठा मिलते ही वह स्वयं उसी रास्ते को अपनाता है। उपन्यास में राजनैतिक पतन के साथ ही कश्मीरी समाज में व्याप्त सामाजिक रूढ़ियों और आमजन का राजनीति के प्रति होनेवाले मोहभंग का भी चित्रण किया गया है।

'कश्मीर की कसक':

भारत-पाकिस्तान युद्ध और कश्मीर पर पड़ने वाले उसके प्रभाव का चित्रण सन् 1970 में प्रकाशित मनमोहन सहगल के उपन्यास 'कश्मीर की कसक' में मिलता है। यह उपन्यास "१९६५ ई. में हुए भारत-पाकिस्तान युद्ध की पृष्ठभूमि से प्रारम्भ होता है। उपन्यास की विशेषता यह है कि अपने लघु कलेवर में इसने १९४७ ई. से लेकर अपनी प्रकाशन अवधी तक के जम्मू-कश्मीर के जन-जीवन की सही तस्वीर आँकने का ईमानदार प्रयत्न किया है।"[4] यह उपन्यास युद्ध, दंगा और पंडितों के संघर्ष और उनपर होते अन्याय पर ही केन्द्रित है। इस उपन्यास की कथा चार भागों में बंटी है- 'आक्रमण', 'जम्मू', श्रीनगर' और 'पुनर्वास'। उपन्यास का आरंभ 1965 में पाकिस्तान द्वारा भारत पर किए गए हमले से होता है। इस हमले के दौरान चरणदास के माध्यम से राजौरी क्षेत्र के निवासियों का विस्थापन, प्रेमो के माध्यम से स्त्रियों का शारीरिक शोषण और कश्मीरी पंडितों की संपत्ति पर महमूद जैसे असामाजिक लोगों के जबरन कब्जे का चित्रण है। जैसे, युद्ध ख़त्म होने बाद चरणदास जब रजौरी जाता है तो देखता है कि महमूद ने उसकी संपत्ति पर कब्जा कर लिया है। चरणदास तमाम प्रयासों के बावजूद अपनी संपत्ति महमूद से वापस नहीं ले पाता और विवश होकर राजौरी छोड़कर चला जाता है। यहीं इस उपन्यास का अंत हो जाता है।

1980 के बाद प्रकाशित हिंदी उपन्यासों में कश्मीर-

सफ़दर हाशमी लिखते हैं, "किताबें/करती हैं बाते/बीते ज़मानो की/दुनिया की, इंसानों की/आज की, कल की/एक-एक पल की।"[5] इस कविता को यदि 1980 के बाद प्रकाशित कश्मीर केन्द्रित हिंदी उपन्यासों के संदर्भ में देखे तो इन उपन्यासों में कश्मीर के इतिहास, राजनीति, अतीत और वर्तमान के साथ उस पीड़ा को दर्ज किया गया है जिसे वहाँ के लोगों ने भोगा है, उस बेबसी का चित्रण किया गया है जो उनकी नियति बनती जा रही है, उस संघर्षको उजागर किया गया है जो अपनी अस्मिता की रक्षा लिए किया गया है।

'ऐलान गली जिंदा है':

चन्द्रकान्ता का उपन्यास 'ऐलान गली जिंदा है' सन् 1984 ई. में प्रकाशित है। गोपाल राय इस उपन्यास के संबंध में लिखते हैं, "ऐलान गली जिन्दा है में श्रीनगर की ऐलान गली में कई पीढ़ियों के एक साथ रहते-जीते परिवेश को एक गहरे दर्द के साथ उकेरा गया है।"[6] 'धरती का स्वर्ग' कहे जानेवाले कश्मीर की कथा लिखने के लिए चन्द्रकान्ता ने इस उपन्यास में एक ऐसी गली को चुना है जहाँ स्वर्ग का सौन्दर्य नहीं गंदगी, कीचड़, अज्ञान और अन्धकार है, लेकिन इस गली में रहनेवालों को इससे कोई फर्क भी नहीं पड़ता और वे इसे ऐसे ही बनाए रखना चाहते हैं। ऐलान गली को चौड़ा करने की सरकारी योजना इसलिए रद्द हो जाती है क्योंकि गली के एक ओर मस्ज़िद थी तो दूसरी ओर मंदिर। इन दोनों में से किसी का भी टूटना गली के निवासियों के धार्मिक विश्वास पर प्रहार था। अत: इसका "परिणाम यह हुआ कि पूरा शहर सुधर-सँवर गया, पर ऐलान गली ज्यों-की त्यों बनी रही, बाबा आदम जमानेवाली।"[7]

ऐलान गली का परिचय देते हुइ चन्द्रकान्ता लिखती हैं, "कन्धे से कन्धा जोड़कर खड़े मकान! इस घर में क्या हो रहा है, उस घर में क्या पाक रहा है! अलाँ की बहु के लच्छन कैसे हैं, फलाँ की बेटी का चलन कैसा है! आँगन, खिड़की, रोशनदार, कहीं से भी झाँक-उझककर पता लगा लो, तबियत हल्की हो जाएगी।"[8] चन्द्रकान्ता के लेखन की यह विशेषता है कि वह केवल उपन्यास नहीं लिखती हैं बल्कि उसे लिखने का कारण भी बताती हैं। जैसा कि कथावस्तु के रूप में ऐलान गली को चुनने का कारण बताते हुए वह लिखती हैं, "वहीं कहीं आसपास मेरा पहला रुदन गूँजा था। मेरे डगमगाते पाँवों के आड़े-मेड़े निशान उसी मिट्टी पर ठप्पे की तरह अंकित हो गए"[9] चन्द्रकान्ता द्वारा इस गली का चयन अकारण नहीं है बल्की उन्होंने इसे बहुत करीब से देखा है। उपन्यास के माध्यम से चन्द्रकान्ता कश्मीरी-जीवन के उस पक्ष का चित्रण करती हैं जो पर्यटकों को भले आकर्षित न करे लेकिन सामान्य जनजीवन की कुंठा, छटपटाहटऔर बेबसी की गवाह अवश्य बनती है।

उपन्यास में दो खंड हैं। पहले खंड में गली का परिचय के साथ उसके निवासियों जैसे संसारचंद, दयाराम मास्टर, अनवर मियां, अर्जुननाथ, रत्नी, अरून्धती, लच्छी काकी, अवतारा, कुंदन, रूपा, शुभी आदि पात्रों का जीवन है। वहीं दूसरे भाग में इन पात्रों के जीवन में होता बदलाव, संयुक्त परिवार का विघटन, बेरोजगारी, रोज़गार के लिए विस्थापन की विवशता और विस्थापितों का संघर्ष है। उपन्यास के पहले भाग में 'ऐलान गली' में रहनेवालों की सामाजिकता का चित्रण है, जहाँ वे यह मानते हैं कि गली के मकान पास-पास न हो तो "पकवानों का आदान-प्रदान कैसे हो? हारी-बीमारी में, चौखटे में मुहँ घुसा, आवाज भर दो तो मजाल है कि घर के तमाम लोग मुसीबतों में दौड़-धूप करने हाजिर न हो जाएँ।"[10] वहीं दूसरे भाग में जीवन-शैली में होते बदलाव को दिखाया गया है। नई पीढ़ी को पुरानी पीढ़ी की सामाजिकता और अपनापन अपने जीवन में दखलंदाजी लगती है। यह वैचरिक भिन्नता दो पीढ़ियों के बीच मतभेद कारण बनने लगी थी। इस सन्दर्भ में डॉ. रामचन्द्र तिवारी लिखते हैं, "पूरे उपन्यास में पीढ़ियों का अन्तर्विरोध और द्वन्द देखा जा सकता है।"[11]

'पाषाण-युग':

संजना कौल का उपन्यास " 'पाषाण-युग' (1985) कश्मीर समस्या पर केन्द्रित उपन्यास है जिसमें उसके राजनीतिक दुरुपयोग को विश्लेषित करने की सफल कोशिश मिलती है।"[12] यह उपन्यास हिंसा, भय, कामकाजी स्त्रियों की समस्याएँ, सेना और दहशतगर्दों के बीच पिसते कश्मीरियों को केंद्र में रखकर लिखा गया है। उपन्यास की केंद्रीय चरित्र अंजलि है जो कॉलेज में इतिहास पढ़ाती है। अंजलि और उसका परिवार बिगड़ती परिस्थितियों के बावजूद कश्मीर छोड़कर नहीं जाता। भय के ऐसे माहौल में एक कश्मीरी परिवार किस प्रकार कश्मीर में बचेरहने के लिए संघर्ष करता है यही मुख्य कथा के केंद्र में है।

'नरमेध':

'नरमेध' उपन्यास का प्रकाशन सन् 1992 ई. में हुआ है। मनमोहन सहगल का यह उपन्यास पंडितों के विस्थापन और उनके दुबारा बसने के संघर्ष को केंद्र में रखे हुए है। इस उपन्यास में चार भाग हैं- चंडीगढ़, इस्लामाबाद, श्रीनगर और दिल्ली। 'चंडीगढ़' भाग की शुरुआत कैम्प से होती है जो कश्मीरी विस्थापितों से भरी हुई है। इस उपन्यास की कथा "कश्मीर की घाटी की त्रासदी मुख्यत: अमानवीय क्रूरताओं को झेलने के बाद वहां से खदेड़ दिए जाने वाले और पुन: स्थापित होने के लिए संघर्षरत हिन्दुओं के कोण से ही उजागर हुई है।"[13]

उपन्यास का केंद्रीय चरित्र नरेन्द्र है जो 1990 में अपने पूरे परिवार को खोकर अपने चाचाजी के साथ अपनी जान बचाकर चंडीगढ़ कैम्प में आता है। 'चंडीगढ़' भाग में नरेन्द्र, उसके चाचाजी और शंपा के संवादों के माध्यम से कश्मीर के इतिहास, राजनीति और भारत-पाकिस्तान युद्ध का चित्रण किया गया है। उपन्यास का यह भाग केवल कश्मीर की त्रासदियों को ही नहीं समेटता बल्कि नरेन्द्र और प्रवीण के प्रेम-संबंध का चित्रण भी इस भाग में मिलता है। 'इस्लामाबाद' भाग में युवकों को आतंकी बनने की 'ट्रेनिंग' और कश्मीर पर आक्रमण करने की पाकिस्तान की नीतियों का वर्णन किया गया है। 'श्रीनगर' भाग में नरेन्द्र और उसके परिवार को केंद्र बनाकर कश्मीर में बदलती परिस्थितियों, बढ़ती हिंसा, पंडित विरोधी माहौल और कश्मीरियों के बदलते संबंधों का चित्रण किया गया है। 'दिल्ली' भाग में चंडीगढ़, जम्मू और दिल्ली के शरणार्थियों का एकजुट होकर सरकार से अपनी मूलभूत सुविधाओं की मांग को लेकर किया गया संघर्ष है। उपन्यास के इस भाग में नरेन्द्र जब शंपा के साथ 'दिल्ली' जाता है तो वहाँ के कैम्प में उसकी मुलाकात प्रवीण से होती है। प्रवीण विस्थापन के दौरान बलात्कार की यातना झेल चुकी थी और बड़ी मुश्किल से इस कैम्प में पहुँची थी। यहाँ नरेन्द्र और प्रवीण की इस मुलाक़ात द्वारा बलात्कार की शिकार हुई स्त्रियों की उस मन:स्थिति को उजागर किया गया है, जहाँ वे बिना किसी गलती के भी स्वयं को गुनाहगार मानती हैं। प्रवीण भी इस मन:स्थिति के तहत नरेन्द्र को पहचाने से मना

कर देती है क्योंकि वह नहीं चाहती कि नरेन्द्र उसका अतीत जाने, लेकिन शंपा उसकी इस मन:स्थिति को समझते हुए और नरेन्द्र को मिलाने में विशेष भूमिका निभाती है। नरेन्द्र और प्रवीण के विवाह से इस उपन्यास का अंत होता है।

'यहाँ वितस्ता बहती है':

सन् 1992 ई. में चन्द्रकान्ता का उपन्यास 'यहाँ वितस्ता बहती है' प्रकाशित है। यह उपन्यास राजनाथ के माध्यम स्वतंत्रता पूर्व और पश्चात के कश्मीरी-जीवन और समाज में व्याप्त रूढ़ियों, सयुंक्त परिवार में स्त्री की स्थिति, स्त्री शिक्षा, दहेज़ समस्या और उसके विरोध आदि को समेटे हुए है। गोपाल राय इस उपन्यास के संबंध में लिखते हैं, "यहाँ वितस्ता बहती है में एक बुद्धिजीवी और संवेदनशील पात्र के चरित्र के माध्यम से कश्मीर के सम्पन्न हिन्दू समाज के सहज प्रवहमान जीवन का जीवन्त चित्रण किया गया है।"[14] उपन्यास के केंद्र में वितस्ता नदी के सामने पाँच मंजिला मकान में रहनेवाले राजनाथ हैं। इस उपन्यास में राजनाथ के चरित्र को चन्द्रकान्ता ने अपने पिता से लिया है। वह लिखती हैं, "यों तो अपने जन्मदाता के ऋणों से कोई सन्तान उऋण नहीं हो सकता। मैंने ज़रूर एक छोटी-सी कोशिश की। यहाँ वितस्ता बहती है, उपन्यास में उनके जीवन-संघर्ष को क़लमबद्ध किया, क्योंकि मैंने उन्हें, नदी किनारे के निष्कंप दीप की तरह अपने चौतरफ़ा अंधेरे को भेदते हुए देखा है, और वितस्ता की तरह बहते हुए, बिना अवरोध, तमाम उम्र!"[15]

उपन्यास में राजनाथ के माध्यम से एक ऐसा आदर्शवादी चरित्र गढ़ा गया है जो सामाजिक कुप्रथाओं और धार्मिक आडम्बरों का ताउम्र विरोध करता है। वहीं उनकी तीनों पत्नियों के माध्यम से स्त्री की सामाजिक स्थिति और त्रासदी का चित्रण किया गया है। राजनाथ के पहली पत्नी सुभद्रा जब बीमार हो जाती है तो वह उन्हें दूसरा विवाह करने और स्वयं को मायके भेजने का अनुरोध करती है। यहाँ सुभद्रा जैसी स्त्रियों की उस अनकही पीड़ा का चित्रण है जो उनके त्याग की महिमा तले दबी होती है। राजनाथ न चाहते हुए भी सुभद्रा की बात मानते हैं और गौरी

से विवाह करते हैं। गौरी उन्हें संतान सुख तो देती है लेकिन स्वयं संयुक्त परिवार के अकेलेपन में अपने पति को ढूंढते-ढूंढते मर जाती है। गौरी के द्वारा इस उपन्यास में स्त्री के अकेलेपन का चित्रण किया गया है। बच्चों को सँभालने के लिए राजनाथ पुन: देवकी से विवाह करते हैं। देवकी विधवा थी और उसकी पहले विवाह से उसे कोई संतान नहीं थी। देवकी अपने ऊपर लगे बाँझ होने के कलंक को मिटाना चाहती है। उसकी एकमात्र इच्छा संतान की चाह थी लेकिन उसकी यह इच्छा पूरी होकर भी अधूरी रह जाती है। उसका बेटा जन्म के समय ही मर जाता है और कुछ समय बाद देवकी की मृत्यु भी हो जाती है और राजनाथ पुन: अकेले हो जाते हैं। अपनी तीनों पत्नियों और बेटी मिन्ना की मौत का दु:ख उन्हें भीतर से इतना अधिक तोड़ देता है कि अंतत: भरे-पूरे परिवार के बीच मानसिक अकेलापन भोगते उनकी मृत्यु हो जाती है।

'नौशीन':

पद्मा सचदेव का उपन्यास 'नौशीन' सन् 1995 ई. में प्रकाशित है। उपन्यास की केन्द्रीय चरित्र हसीना है। हसीना शालवालों की बेटी थी और अपने माता-पिता की इज़ाज़त के बगैर उसने एक हाजी परिवार के लड़के से निकाह किया था, जिसके कारण उसका परिवार उससे सभी संबंध तोड़ देता है। विवाह के बाद वह अपने पति फ़रहाद के साथ मुंबई चली जाती है। हसीना के विवाह के लगभग 20 वर्षों बाद उसका भाई इम्तियाज़ उससे मिलने मुंबई आता है। इम्तियाज़ को आतंकी होने के संदेह में गिरफ्तार किया गया था और जेल से छूटने के बाद वह हसीना के पास चला आता है, क्योंकि कश्मीर में रहना अब उसे सुरक्षित नहीं लगता है। इम्तियाज़ से इतने वर्षों बाद मुलाक़ात होने पर हसीना उससे बातचीत के दौरान अपने अतीत को दोबारा जीती है।

आतंक एवं हिंसा को केंद्र में रखे इस उपन्यास की कथा हसीना और उससे जुड़े लोगों के इर्द-गिर्द घूमती रहती है। इस उपन्यास में कश्मीर की उस विडंबना का चित्रण किया गया है जो कश्मीरियों की नियति बन गई है।

'घटता-बढ़ता चाँद':

मनमोहन सहगल का सन् 1996 ई. में प्रकाशित उपन्यास 'घटता-बढ़ता चाँद' कश्मीर में 'गीतों की रानी' कही जानेवाली हब्बा ख़ातून के जीवन पर केन्द्रित है। मनमोहन सहगल के अनुसार "कश्मीर की अमर कवयित्री हब्बा ख़ातून उपन्यास की चरित-नायिका है"[16] चाँद के घटने-बढ़ने से हब्बा ख़ातून के जीवन में आनेवाले सुख-दुःख की तुलना करने वाले इस उपन्यास में हब्बा ख़ातून के जीवन-कथा के साथ-साथ कश्मीर के सौन्दर्य, तत्कालीन समय में स्त्री की सामाजिक स्थिति, इतिहास एवं राजनीति को भी समेटा गया है। हब्बा खातून का नाम बचपन में ज़ून था, जिसका अर्थ होता है- 'पूरा चाँद'। जिस प्रकार चाँद घटता-बढ़ता रहता है उसी प्रकार हब्बा ख़ातून का जीवन भी एक समान नहीं रहता है। हब्बा ख़ातून के जीवन में आने वाले इसी उतार-चढ़ाव के आधार पर इस उपन्यास का शीर्षक 'घटता-बढ़ता चाँद' रखा गया है। उपन्यास की कथा का आधार हब्बा खातून के 'वचन' है। ससुराल में मिली प्रताड़ना और अपमान के कारण वह मायके चली जाती है और कश्मीर के भावी शासक शहजादे युसूफ से उसकी मुलाकात होती है और वह हब्बा खातून को अपनी मल्लिका बनाकर अपने साथ अपने महल ले जाता है। जब मुग़ल सम्राट अकबर कश्मीर पर आक्रमण कर युसूफ शाह को बंदी बना लेता है तब हब्बा ख़ातून महल छोड़कर जाने को विवश हो जाती है। युसूफ शाह से बिछड़ने के कारण हब्बा खातून का जीवन विरह-गीत गाते ही व्यतीत होता है और युसूफ शाह से हुए बिछोह की पीड़ा के साथ ही हब्बा खातून की मृत्यु हो जाती है और यहीं यह उपन्यास समाप्त हो जाता है।

'कथा सतीसर':

चन्द्रकान्ता का उपन्यास 'कथा सतीसर' सन् 2001 ई. में प्रकाशित है। अपने वृहद कलेवर में यह उपन्यास कश्मीर के उदय संबंधी कथा, इतिहास, मिथक, लोक-जीवन, राजनीति, समाज, साझी संस्कृति, सांस्कृतिक विखंडन, आतंक, हिंसा और विस्थापन को समेटे हुए है। 'कथा सतीसर'

उपन्यास में कश्मीर में हुए राजनीतिक, सामाजिक और मानसिक बदलाव तथा उसका कश्मीरी जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों का सूक्ष्मता से चित्रण किया है।

'कथा सतीसर' उपन्यास में अतीत, वर्तमान और भविष्य तीनों का चित्रण मिलता है। एक ओर जहाँ कश्मीर का आरंभिक इतिहास और राजनीति है, वहीं दूसरी ओर कश्मीर का वह वर्तमान है जहाँ सामाजिक-राजनीतिक कारणों से प्रभावित होता जीवन है, संबंधों की टकराहट है, बढ़ता संदेह और घटता अपनापन है, आतंक और सामाजिक रूढ़ियों में जकड़ी और मुक्ति का मार्ग तलाशती स्त्री है, कश्मीर का लोकजीवन, लोकगीत, लोक कथाएं, त्योहार और संस्कृति है। तीसरी ओर भविष्य में सब बेहतर होने की उम्मीद है।

उपन्यास की कथावस्तु के संबंध में चन्द्रकान्ता लिखती हैं, "इस कथा में मैंने 1931 ईस्वी से लेकर 2000 के शुरूआती समय के बीच, बनते-बिगड़ते कश्मीर की कहानी कही है। इस कथा में, कश्मीर के सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्यों में घटे, छोटे-बड़े हादसों से, जनजीवन के आपसी रिश्तों पर पड़े प्रभावों का संवेदनात्मक परिक्षण है। नेपथ्य में कश्मीर का इतिहास, भूगोल, पुराण, राजनीति, मिथ, लेजेंड और किस्से-कहानियाँ हैं, जिनसे कश्मीर का लोकमानस और 'कश्मीरियत' का निर्माण हुआ है।"[17]

'कश्मीर की बेटी':

सन् 2002 ई. में प्रकाशित शत्रुघ्न प्रसाद के उपन्यास 'कश्मीर की बेटी' का कथानक ऐतिहासिक है। उपन्यास की कथावस्तु सन् 1320 ई. से 1339 ई. में कश्मीर में हुए राजनैतिक बदलाव को समेटे हुए है। उपन्यास का शीर्षक 'कश्मीर की बेटी' कोटा रानी के लिए है जो कश्मीर के तत्कालीन शासक राजा सहदेव के सामंत रामचंद्र की पुत्री थी। कश्मीर के राजा सहदेव मंगोल आक्रमणकारी दुलचा का सामना न कर पाने की स्थिति में पलायन कर लेते हैं और उनके बाद राज्य उनके सामन्त रामचन्द्र सँभालते हैं। रामचन्द्र की मृत्यु के बाद कश्मीर पर क्रमश: रिंचन, जो

बौद्ध था और धर्म परिवर्तन कर मुसलमान बना था, उदयनदेव और शाहमीर का शासन होता है। कोटा रानी का विवाह पहले रिंचन और उसकी मृत्यु के बाद उदयदेव से होता है। उदयदेव की मृत्यु के बाद कोटा रानी कश्मीर का शासन संभालती हैं। कोटा रानी को परास्त कर शाहमीर कश्मीर पर आधिपत्य कर लेता है और कोटा के समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखता है। शाहमीर कोटा रानी को स्पर्श करे इसके पहले ही कोटा रानी आत्महत्या कर लेती है। जिसके साथ ही उपन्यास उपन्यास का अंत भी हो जाता है लेकिन उपन्यास में दिए इस तथ्य से विपरीत तथ्य भी मिलते हैं। जोनराज अपने ग्रन्थ 'राजतरंगिणी' में कोटा रानी के संबंध में लिखते हैं,

"एकस्मिज्शयने रात्रिमतिवाद्य तया सम्म्।/स प्रातरुत्थितो जातु तीक्ष्णैर्देवीमरोधयत्॥ ३०५॥ / ३०५ उसके समान एक शयन पर रात्रि व्यतीत कर, प्रातः उठकर, वह तीक्ष्णों (बधिकों) द्वारा देवी को रोध (बन्दी) कर लिया।"[18] और बाद में संभवत: उसकी हत्या करवा दी। हालाँकि तथ्यात्मक सच्चाई चाहे जो भी रही हो लेकिन इस उपन्यास में कोटा रानी को एक साहसी स्त्री के रूप में प्रस्तुत किया गया है जो अपने राज्य को आक्रमणकारियों से बचाने के लिए यथासंभव प्रयास और संघर्ष करती है।

'दर्दपुर':

क्षमा कौल का उपन्यास 'दर्दपुर' सन् 2004 ई. में प्रकाशित है। रामचंद्र तिवारी इस उपन्यास के संबंध में लिखते हैं, "इसमें कश्मीरी जीवन और कश्मीर से कश्मीरी पण्डितों के करुण विस्थापन को उसकी समग्रता में प्रस्तुत किया गया है। कथा नायिका सुधा के अनुभव संसार को केन्द्र में रखकर रची गई रचना है जिसमें कश्मीरी संस्कृति और समाज के भयावह विखण्डन का चित्रण हुआ है। कश्मीरी पण्डितों और मुसलमानों के बीच के आत्मीय सम्बन्ध को धार्मिक उन्माद, आतंक और राजनेताओं के स्वार्थ ने किस तरह समाप्त किया, इसका यथार्थ चित्रण इस उपन्यास में हुआ है।"[19] उपन्यास में आतंकवाद और उससे उपजे निर्वासन की पीड़ा झेलते उन कश्मीरियों

की कथा है जिनकी जड़ें कश्मीर से विस्थापित होने के बाद भी वहीं रह गई हैं।

'धार्मिक आतंक की सतायी विश्व की सभी स्त्रियों के नाम' समर्पित इस उपन्यास की केन्द्रीय चरित्र सुधा है। सुधा विस्थापित कश्मीरी पंडित है जो एक 'एनजीओ' से जुड़ने के बाद गुलशनआरा और सुमोना के साथ कश्मीरी मुसलमान स्त्रियों की स्थिति जानने कश्मीर जाती है। उनकी पीड़ा जानने के क्रम में सुधा और उस जैसे कई विस्थापितों की पीड़ा भी उजागर होती जाती है। इस उपन्यास में उन कश्मीरी पंडितों की समस्याओं का भी चित्रण भी किया गया है जो कश्मीर में रह गए थे। सुधा का मानना था कि केवल विस्थापित ही अस्मिता और पहचान के संकट से जूझ रहे हैं, लेकिन नीरा से मिलने के बाद उसका यह भ्रम टूटता है। नीरा सुधा से कहती है, "कश्मीर से न निकलने का उनको कोई लाभ नहीं हुआ। उल्टे वे कहीं के नहीं रहे।...न अपने समाज के, न उस समाज के जिनके साथ रहने का उसके पिता ने, बेटियाँ होने के बावजूद, वीरतापूर्ण निर्णय लिया।"[20] नीरा जैसे कश्मीरी पंडित विस्थापित न होने के बाद भी कई प्रकार की समस्यायों से जूझ रहे हैं। यह उपन्यास उन सभी कश्मीरी पंडितों की पीड़ा और बेबसी को समेटे हुए है जो अपने सम्मान और पहचान के लिए संघर्षरत हैं।

'एक कोई था कहीं नहीं-सा':

मीरा कांत का उपन्यास 'एक कोई था कहीं नहीं-सा' सन् 2009 ई. में प्रकाशित हुआ है। पुष्पपाल सिंह के अनुसार इस उपन्यास में "मिथकीय आख्यानों में वर्णित कश्मीर के इतिहास, संस्कृति और जन-जीवन का गहरा परिचय देकर यह रेखांकित किया गया है कि किस प्रकार कश्मीर में अलगाववादी ताक़तों ने धीरे-धीरे पैर ज़माना शुरू कर दिए थे"[21] कश्मीर की संस्कृति, राजनीति और निर्वासित जीवन को समेटे हुए यह उपन्यास कश्मीरी जीवन समाज को समझने के प्रयास में महत्वपूर्ण कड़ी है। उपन्यास कश्मीर के उस यथार्थ से परिचित कराता है जहाँ एक ओर विस्थापन में बेघर हुए लोग अपने जड़ों को तलाश रहे हैं वहीं दूसरी ओर कश्मीर में अचानक

बढ़ती हत्या और बलात्कार की घटनाएँ लोगों को बुरी तरह से भयभीत कर रही हैं। उपन्यास की कथा तीन भागों में विभक्त है- 'सोशल रिफ़ार्म ज़िन्दाबाद', 'बर्फ़ का घर' और 'चौथा चिनार'।

'सोशल रिफ़ार्म ज़िन्दाबाद' भाग में कश्मीरी-जीवन और समाज में व्याप्त कुरीतियों जैसे, अनमेल विवाह, विधवाओं की दयनीय स्थिति, विधवा विवाह का विरोध आदि का चित्रण किया गया है एवं कश्यप बन्धु द्वारा "लड़कियों की शिक्षा, विधवाओं के पुनर्विवाह, दहेज-निषेध, उत्सवों पर कम से कम खर्च की मुहिम चलाई थी"[22] उसका चित्रण भी किया गया है। समाज-सुधार की इस मुहिम में उपन्यास के पात्र अम्बरनाथ, नित्यानानन्द और बाद में शबरी भी जुड़ते हैं। 'बर्फ़ का घर' भाग में महात्मा गांधी के कश्मीर जाने से लेकर 90 के दशक में हुए विस्थापन का चित्रण किया गया है। 'चौथा चिनार' भाग में कैम्प में कश्मीरी पंडितों की दयनीय स्थिति और जया के माध्यम से कश्मीर वापसी पर कश्मीरियों की उस वेदना का चित्रण है जहाँ वे स्वयं को स्वयं को पर्यटक की स्थिति में पाते हैं।

'शिगाफ़':

सन् 2010 ई. में प्रकाशित मनीषा कुलश्रेष्ठ का उपन्यास 'शिगाफ़' निर्वासन के दंश और कश्मीर में रहनेवालों की पीड़ा को अभिव्यक्त करता है। 'ला माँचा की राह पर', 'वापसी', 'चिनार की दो पत्तियाँ', 'वार विद इन' या 'वार विद हैल्ड', 'जुलेख़ा का मिथक', 'आत्मालाप' और 'बदलते मौसम: शांति की अफ़वाह' भागों में विभक्त यह उपन्यास उनको केंद्र में रखे हुए है जो आतंक और हिंसा की भेंट चढ़ गए हैं। उपन्यास का आरंभ 'ला माँचा की राह पर' भाग से होता है। उपन्यास के केंद्र में अमिता है जो कश्मीर से विस्थापित होने के बाद जम्मू और किराये के घर से होती हुई स्पेन जा बसती है। अमिता स्पेन में अपने गुज़ारे के लिए अनुवादक का काम करती है और अपने कश्मीर संबंधी अनुभवों पर ब्लाग लिखती है। 'वापसी' भाग में वह अपने दोस्त और संपादक इयान बांड के सुझाव पर कश्मीर पर किताब लिखने के लिए कश्मीर जाती है और वहाँ

जाकर उसे यह महसूस होता है कि उसने "अपने वजूद को घटाकर पर्यटक बना दिया है। अब मैं वहाँ की निवासी नहीं।"[23] कश्मीर पहुँचकर वह इस यथार्थ से भी अवगत होती है कि जो कश्मीर में रह गए उनका जीवन भी आसान नहीं रह गया था। 'चिनार की दो पत्तियाँ' खण्ड में कश्मीर में अमिता की मुलाक़ात अपने शिक्षक रहमान सर से होती है। रहमान सर अमिता को अपनी बेटी की डायरी देते हैं, "यास्मीन की इसी डायरी के माध्यम से दहशतगर्दी के दौरान कश्मीरी मुस्लिम स्त्रियों की दुर्दशा के ब्यौरे सामने आते हैं, उसी में अपरिपक्व कश्मीरी युवकों के गुमराह होने की त्रासद कथा दर्ज है, जो लगातार जहालत की जिन्दगी जीते और बेमौत मारे जाते रहे हैं।"[24] यास्मीन और वसीम एक-दूसरे से प्रेम करते हैं, लेकिन वसीम आतंकी बन जाता है और यास्मीन का विवाह किसी और से हो जाता है और एक दिन बम धमाके में यास्मीन की मृत्यु हो जाती है। यास्मीन की डायरी केवल उसके जीवन-संबंधी घटनाओं और वसीम के साथ उसके प्रेम संबंध को ही दर्ज नहीं करती बल्कि उसकी डायरी उन कश्मीरियों की पीड़ा का दस्तावेज है जिनकी जिंदगी एक खोल में बंद है। जिससे बाहर निकलने के लिए वे छटपटा रहें हैं। 'वार विद इन' या 'वार विद हैल्ड' में कश्मीर में अमिता का मेज़र शांतनु और पत्रकार जमाल से मुलाकात का चित्रण है। यह दोनों अलग-अलग क्षेत्र से हैं और दोनों के पास अपना-अपना सच है। मेज़र शांतनु जहाँ सेना पर मानवाधिकार द्वारा लगाए जानेवाले आरोपों के प्रति अपना क्रोध व्यक्त करते हैं वहीं पत्रकार ज़माल कश्मीर में बढ़ती गुमनाम कब्रों की संख्या पर चिंता व्यक्त करता है। उपन्यास के इस भाग में केवल इन दोनों की वैचारिक टकराहट ही नहीं है बल्कि प्रेम का त्रिकोण भी है। मेज़र शांतनु और ज़माल दोनों अमिता को पसंद करते हैं लेकिन अमिता तय नहीं कर पाती कि वह किसे चुने। प्रेम का यह अंतर्द्वंद उपन्यास के अंत तक बना रहता है। 'जुलेख़ा का मिथक' भाग प्रेम के सम्मोहन में कश्मीरी स्त्री के शोषण और उसे गुमराह किए जाने का चित्रण किया गया है। 'आत्मालाप' खंड में अमिता द्वारा वसीम को यास्मीन की डायरी दिए जाने के बाद वसीम के मोहभंग का चित्रण है। वसीम को आज़ादी के जिस यथार्थ से परिचित कराने में यास्मीन असफल

रही थी, वह काम उसकी डायरी पूरा करती है। वसीम स्वयं से कहता है, "तुम्हारी यह डायरी अमिता ने दी है। यह तुम्हारी आवाज़ बनकर मेरे साथ रहेगी। मैं आज़ादी की जंग और आज़ादी के नारे के मायनों पर दुबारा सोचूँगा।"[25] 'बदलते मौसम: शांति की अफ़वाह' में 2005 में कश्मीर में आए भूकंप के साथ अमिता के स्पेन लौटने का चित्रण है। अमिता की किताब इयान बांड द्वारा छपने के लिए स्वीकृत हो जाती है जिसके प्रकाशन के लिए वह स्पेन जाती है और यही इस उपन्यास का अन्त होता है।

'सूखते चिनार':

सन् 2012 ई. में प्रकाशित मधु कांकरिया का उपन्यास 'सूखते चिनार' की कथा कलकत्ते से कश्मीर जाती है। जैसा कि डॉ. रामचंद्र तिवारी कहते हैं, "कलकत्ते के सुखद गर्म वासे से काश्मीर के दु:खद ठंडे बेस कैम्प तक।"[26] यह उपन्यास कश्मीर और वहाँ नियुक्त सैनिकों के जीवन को केंद्र में रखकर लिखा गया है। उपन्यास के पहले भाग में चार शीर्षक हैं- 'स्वप्न और उड़ान', 'युद्ध और बुद्ध', 'मेजर सन्दीप का आत्मालाप' और दूसरा 'भाग दो' है। 'स्वप्न और उड़ान' भाग में सन्दीप की सेना में नियुक्ति, 'ट्रेनिंग' के दौरान आनेवाली कठिनाइओं, आर्मी जीवन की जटिलताओं, कड़ा अनुशासन और छोटी-छोटी गलतियों पर भी मिलनेवाली कठोर सज़ा, 'स्व' की जगह 'समूह' को महत्व देने और सामान्य व्यक्ति से सैनिक बनने की प्रक्रिया, कश्मीर में सेना का जीवन और कश्मीर-समस्या का चित्रण किया गया है। उपन्यास का आरंभ सन्दीप के आर्मी 'ज्वाइन' करने के संघर्ष से होता है। जहाँ अखबार में छपे 'Nation needs you' विज्ञापन को पढ़कर उसके जीवन का उद्देश्य बदल जाता है और देश के लिए कुछ करने का जुनून उसे सेना में ले गया था। सन्दीप के पिता उसे समझाते हैं कि फौज का जीवन उसके लिए नहीं है क्योंकि उनके अनुसार यह मज़बूरी में की गई नौकरी है और सन्दीप के सामने ऐसी कोई मज़बूरी नहीं है, लेकिन पिता द्वारा उपलब्ध की गई तमाम सुविधाओं के बाद भी सन्दीप को वह जिंदगी नहीं चाहिए थी जो उसके पूर्वजों की थी एवं जो उसके पिता जी रहे थें "क्योंकि जब-जब वह पिता को दुकान पर

बैठे पीतल के बर्तन तौलते देखता उसे लगता कि उनकी दुनिया में कोई भारी कमी है। सबकुछ है पर जैसे कुछ नहीं है। जीवन है पर स्पन्दन नहीं। उसे पूरा विश्वास था कि जीवन के अधूरेपन से, इस अपूर्णताबोध से उसे छुटकारा मिल सकता है तो सिर्फ फौजी बनकर।"[27] उपन्यास में केवल कश्मीरी-जीवन ही नहीं बल्कि आर्मी जीवन, उसके सिद्धांत और मूल्यों को भी सूक्ष्मता से विश्लेषण किया गया है। उपन्यास में कश्मीर का चित्रण सन्दीप की कश्मीर में पोस्टिंग के साथ ही आता है। कश्मीर का भयावह यथार्थ, वहाँ होनेवाली हिंसा और उसे रोकने की प्रक्रिया में सन्दीप को यह महसूस होता है कि "यह कश्मीर उन्हें इंसान भी नहीं रहने देगा। सोख लेगा ज़िन्दगी के सारे सौन्दर्य और संवेदन को। नहीं सोने देगा एक मीठी स्वाभाविक नींद!"[28] 'युद्ध और बुद्ध' भाग में मेज़र सन्दीप का अंतर्द्वंद और आतंकी बने ज़मील के परिवार की दयनीय स्थिति का चित्रण है। 'मेजर सन्दीप का आत्मालाप' भाग में सन्दीप का स्वयं से संवाद है और 'भाग दो' में सिद्धार्थ की आधुनिक जीवन शैली की विडंबना और मेज़र सन्दीप और रूबीना का प्रेम संबंध है। जहाँ रूबीना के सामने अपने प्रेम और अपने धर्म में से किसी एक को चुनने का अंतर्द्वंद है। यह अंतर्द्वंद रूबीना के भाई ज़मील, जो आतंकी बन गया था, का मेज़र सन्दीप और उनकी 'टीम' द्वारा मारे जाने के कारण उत्पन्न हुआ है। रूबीना मेज़र सन्दीप को स्वीकार नहीं करती क्योंकि वह मानती है कि कश्मीरी मुसलमानों ने जो कुछ झेला है उसकी जिम्मेदार भारत सरकार और उसकी फौज है। मेज़र संदीप चूँकि भारतीय फौज का हिस्सा है अत: रूबीना के लिए यह संभव नहीं था कि वह उसके साथ कोई भी संबंध रखे। रूबीना के सामने सेना की छवि कश्मीरी मुसलमानों के शत्रु के रूप में प्रस्तुत की गई थी, लेकिन उसका यह भ्रम टूट जाता है। आंतकियों को पनाह देने के आरोप में रूबीना को जेल हो जाती है। जेल से वह मेज़र सन्दीप को लिखे अपने पत्र में वह स्वीकार करती है कि "मैंने तुम्हे ठुकराया क्योंकि मुझे लगता था कि हमारी तबाही के लिए हिन्दुस्तानी सरकार और फ़ौज ज़िम्मेदार है, पर मेरे साथ जो हुआ वह किसी फ़ौज या हिन्दुस्तानी ने नहीं किया वरन् हमारे अपनों ने किया। ख़ुद जेहादियों ने किया।"[29] रूबीना को यह एहसास

होता है कि अब तक वह इस भुलावे में थी कि सेना कश्मीरियों की शत्रु है जबकि उनके शत्रु तो वह दहशतगर्द हैं जो स्वयं को उनका रक्षक कहते हैं। रूबीना का पत्र पढ़ने के बाद मेज़र सन्दीप उसके रिहाई के लिए क़ानूनी लड़ाई लड़ने का फैसला लेते हैं और यहीं इस उपन्यास का अंत हो जाता है।

'इक़बाल':

जयश्री राय का उपन्यास 'इक़बाल' सन् 2014 ई. में प्रकाशित हुआ है। उपन्यास के संबंध में ज्योतिष जोशी लिखते हैं, उपन्यास "कश्मीर को उसकी त्रासदी के विभिन्न आयामों में देखता है और उसे देखने का नया दृष्टिकोण भी देता है। उपन्यास के भीतर एक प्रेमकथा विन्यस्त है जो त्रासद कश्मीर को उसकी विडम्बनाओं के साथ उठाती है और एक भयावह ख़ामोशी में बदल जाती है। कश्मीर पर लिखे गये अनेक उपन्यासों में 'इक़बाल' का महत्व इस दृष्टि से अधिक है कि वह 'प्रेम' की खोज करता है। उसका प्रतिपक्ष 'घृणा' है जो समस्त मानवता पर भारी है।"[30] उपन्यास के केंद्र में जिया और इक़बाल की अधूरी प्रेमकथा के साथ कश्मीर का यथार्थ भी है। इस उपन्यास के केंद्र में गोवा में रहनेवाली जिया है। जिया कश्मीर पर उपन्यास लिखना चाहती है। इक़बाल, जो कश्मीर में 'फॉरेस्ट आफिसर' था, से जिया की मित्रता 'फेसबुक' पर होती है और यह मित्रता इतनी प्रगाढ़ होती जाती है कि अपने भाई के मना करने के बावजूद जिया इक़बाल के आग्रह पर कश्मीर चली जाती है। कश्मीर में जिया की मुलाक़ात अलग-अलग वर्ग के लोगों से होती है। हर मुलाकात उपन्यास में एक अलग पक्ष एवं दृष्टिकोण सामने लाता है। इन्हीं मुलाकातों से जिया कश्मीर के उस यथार्थ से परिचित होती है।

उपन्यास में जिया और इक़बाल की उपस्थिति द्वारा जयश्री राय ने दो विरोधी विचारधाराओं की टकराहट को सामने रखा है। जैसे इक़बाल जिया से कहता है, "देखिये हम लोग एक-दूसरे से बिल्कुल अलग हैं— हमारा मज़हब, हमारी तहज़ीब, खान-पान, ज़ुबान...आप लोग पूरब तो हम

लोग पश्चिम। मिलकर रहना बहुत मुश्किल! ये बंटवारा, दंगे-फसाद, शक-सुबहा इसी के नतीज़े हैं...।....आप लोगों के मातहत होकर रहना हमें मंजूर नहीं"[31] वहीं जिया इक़बाल से कहती है "सबकुछ अलग-अलग है तो क्या, हमारी मातृभूमि, मां तो एक है।"[32] उपन्यास में जिया और इक़बाल एक-दूसरे से प्रेम करते हैं। इक़बाल के विवाहित होने के कारण उनका संबंध आगे नहीं बढ़ पाता है लेकिन प्रेम का अंतर्द्वंद पूरे उपन्यास में चलता रहता है। उपन्यास में जिया जब दुबारा कश्मीर जाती है तो उसका अपहरण हो जाता है। जिया के भाई गोवा में राजनेता थे अत: आतंकी समूह द्वारा जिया का अपहरण सरकार से अपनी बात मनवाने के लिए किया जाता है। जिया को बचाने के प्रयास में इक़बाल की मृत्यु हो जाती है और उपन्यास समाप्त हो जाता है।

'ख़िलाफ़त':

सन् 2018 ई. में प्रकाशित गोविन्द मिश्र का उपन्यास 'ख़िलाफ़त' कश्मीर में रहनेवाले यूनुस जो सुन्नी मुसलमान है और आलिया जो शिया मुसलमान है के माध्यम से कश्मीर में शिया-सुन्नी विवाद, धार्मिक कट्टरता, आतंकवाद, कश्मीरी मुसलमानों की स्थिति और रोजगार के लिए कश्मीर से बाहर गए युवा वर्ग की स्थिति का चित्रण किया गया है।

'काँपता हुआ दरिया':

कश्मीर केन्द्रित हिंदी उपन्यासों के क्रम में मोहन राकेश का अधूरा उपन्यास 'काँपता हुआ दरिया' भी है। यह उपन्यास 'नई कहानियाँ' पत्रिका में मार्च, 1964 से मार्च, 1965 तक कुल ग्यारह किस्तों में प्रकाशित हुआ था। बाद में यह उपन्यास जयदेव तनेजा के द्वारा संकलित मोहन राकेश की रचनाओं के संकलन 'एकत्र: असंकलित रचनाएँ' में भी प्रकाशित हुआ। मोहन राकेश के इस अधूरे उपन्यास को मीरा कांत ने पूरा किया जो सन् 2020 ई. में प्रकाशित हुआ। उपन्यास के केंद्र में खालका है जिससे मोहन राकेश की मुलाक़ात उनके कश्मीर यात्रा के दौरान हुई थी।

"कश्मीर के सौंदर्य और रूमानी प्रेम की काल्पनिक कहानियों से अलग जेहलम में घर बनाकर

रहनेवाले निम्नवर्गीय हाँजी परिवार के सुख-दुःख तथा संवेदनाओं के टकराव एवं जीवन के कठोर यथार्थ"[33] को कथावस्तु में समेटे यह उपन्यास उन हाजियों के जीवन पर केन्द्रित है जिनके 'हाउसबोट' तो कश्मीर में 'टूरिस्टों' के आकर्षक का केंद्र भले हो लेकिन उनकी आर्थिक स्थिति दयनीय है। पर्यटकों के इंतज़ार में गुजरते इनके जीवन का हर एक दिन एक नया संघर्ष है। इस उपन्यास में क़बायली हमले के संक्षिप्त वर्णन के साथ ही खालका और उसकी पत्नी बेगम के माध्यम से व्यक्ति-मन के अकेलेपन और अधूरेपन और अंतर्द्वंद का भी चित्रण किया गया है।

'बर्फ़ और अंगारे':

सुधाकर अदीब का उपन्यास 'बर्फ़ और अंगारे' सन् 2020 ई. में प्रकाशित है। अमरनाथ के परिवार को केंद्र में रखकर लिखे गए इस उपन्यास में कश्मीर के इतिहास, राजनीति, हिंसा एवं विस्थापन का चित्रण हुआ है।

'मूर्तिभंजन':

क्षमा कौल का उपन्यास 'मूर्तिभंजन' सन् 2021 में प्रकाशित है। उपन्यास 'मन्त्र', 'रहस्य', 'मूर्ति'और 'उपसंहार' चार अनुक्रमों में विभक्त है। उपन्यास के केंद्र में इरामंजरी का परिवार है जो कश्मीर से विस्थापित है। इरामंजरी की बेटी नीरजा, जो मूर्तिकार है, इस उपन्यास की मुख्य पात्र है। नीरजा और उसके परिवार के माध्यम से विस्थापन और स्त्रियों के साथ होते लैंगिक भेदभाव को भी इस उपन्यास में उठाया गया है। इरामंजरी को संतान के रूप में बेटे की चाह थी लेकिन उसे तीन-तीन बेटियाँ हो जाती हैं। इरामंजरी हमेशा "प्राथनाएं करती है कि आगे किसी जन्म में ऐसी सौगाते उसे न मिलें। बेटे मिलें, बेटे। सिर्फ बेटे।"[34] इस उपन्यास में विस्थापन, इरामंजरी के द्वारा लिंग के आधार पर संतानों में भेदभाव और नीरजा के माध्यम से स्त्री की अस्मिता, इच्छा और पहचान से जुड़े प्रश्नों को उठाया गया है।

'समय-अश्व बेलगाम':

चन्द्रकान्ता का उपन्यास 'समय-अश्व बेलगाम' सन् 2022 में प्रकाशित हुआ है। "कश्मीरी पंडितों के विस्थापन की पृष्ठभूमि में यह उपन्यास अपनी सांस्कृतिक जड़ों से विच्छिन मनों की पीड़ा तथा ग्लोबलाइजेशन से बौराए हमारे मौजूदा वक्त की कथा है।"[35] विस्थापन की त्रासदी और उपभोक्तावादी संस्कृति से उपजती समस्याओं को समेटे हुए इस उपन्यास के केंद्र में सुरेन्द्रनाथ और उनका परिवार है। इस उपन्यास में जहाँ सुरेन्द्रनाथ और उनकी पत्नी प्रभा के माध्यम से विस्थापित कश्मीरी पंडितों के दुबारा बसने का संघर्ष और पीड़ा का चित्रण किया गया है, वहीं अमेरिका के मल्टीनेशनल कंपनी में कार्यरत उनके बेटे आयुष के माध्यम से विदेशों में नौकरी करनेवालों के जीवन की जटिलता, अकेलापन, नौकरी जाने का भय और अतिरिक्त कार्य करने की मज़बूरी का चित्रण है।

उपन्यास विधा के संबंध में मैनेजर पांडे लिखते हैं, "यह कहा जा सकता है कि जब अपने समय और समाज को जानने की रचनाकार की आकांक्षा इतिहास में प्रवेश करती है तब उपन्यास का जन्म होता है।"[36] लेकिन इतिहास और उपन्यास में यह अंतर होता है कि इतिहास तथ्यों पर आधारित घटनाओं को बताता है और साहित्य मानवीय पीड़ा को। जैसा कि चन्द्रकान्ता ने लिखा है, "वे सच, जो इतिहास उन्हें नहीं बताएगा, क्योंकि वहाँ विजेताओं की कथा होती है। आम जन तो साहित्य के केंद्र में रहता है।"[37] सन् 1980 के बाद प्रकाशित कश्मीर केन्द्रित उपन्यासों ने ऐतिहासिक-राजनैतिक घटनाओं को आधार बनाते हुए भी कश्मीरी जनजीवन को ही केंद्र में रखा हैं। इन उपन्यासों में कश्मीरियों के आर्थिक संघर्ष का, निर्वासन के पूर्व और बाद की परिस्थितियों-मन:स्थितियों का, कैम्प की यातना का, कश्मीर में रहनेवालों के संघर्ष का, मानसिक और शारीरिक यातना झेलती कश्मीरी स्त्रियों का चित्रण ही नहीं किया गया है बल्कि उनकी उस पीड़ा को भी आवाज़ दी है जो अनकही-अनसुनी है। कश्मीर केन्द्रित उपन्यासों ने हिंदी उपन्यास की परंपरा में कश्मीर-विमर्श को जोड़ा है।

ii. **हिंदी कहानियों में कश्मीर:**

हिंदी उपन्यासों की तरह हिंदी कहानियों में भी कश्मीर-समस्या को अभिव्यक्ति मिली है। अपने लघु कलेवर में कश्मीर केन्द्रित कहानियाँ न केवल कश्मीरी-जीवन और उसकी समस्या के विविध पहलुओं का सूक्ष्मता से चित्रण करती हैं, अपितु भय, आतंक और निर्वासन की त्रासदी झेलने को बेबस कश्मीरियों की व्यथा का यथार्थ रूप भी सामने रखती हैं। कश्मीर पर लिखी गई कहानियों में मीरा कांत, संजना कौल, मधु कांकरिया, चन्द्रकान्ता और महाराज कृष्ण संतोषी की कहानियाँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

संजना कौल का कहानी संग्रह 'काठ की मछलियां' सन् 2008 में प्रकाशित है। इस संग्रह में कुल ग्यारह कहानियाँ हैं। जिनमें से 'आधी नदी का सुरज', 'पत्थर और धात का ज़माना', 'काठ की मछलियां', 'विषाद योग', 'यातनाकक्ष', 'जलपाखी', 'शहर दर शहर' और 'अन्तिम वनवास' कहानियाँ कश्मीर केन्द्रित हैं। 'काठ की मछलिया' और 'आधी सदी का सूरज' स्त्री-जीवन और उसकी समस्या पर केन्द्रित कहानियाँ है। 'पत्थर और धात का ज़माना' कहानी में शमीम के माध्यम से दिखाया गया है कि शमीम जिसे साड़ी पहनना बहुत पसंद था वह किस तरह दहशतगर्दों द्वारा मुसलमान स्त्रियों के पहनावे को लेकर जारी किए फरमान के कारण अपना पहनावा बदलने को मजबूर हो जाती है। 'विषाद योग' कहानी में हिंसा और आतंक के भय से संबंधों में होते बदलाव का चित्रण किया गया है। 'यातना कक्ष' कहानी कश्मीर में सैनिक जीवन की जटिलता और कठिनाइयों पर केन्द्रित है। 'शहर दर शहर' कहानी विस्थापित स्त्रियों के प्रति लोगों की दृष्टि और उनके विवाह की समस्या को केंद्र में रखकर लिखी गई है। 'अंतिम वनवास' कहानी में विस्थापन के कारण आहत होते स्वाभिमान का चित्रण मिलता है और 'जलपाखी' कहानी कश्मीरी मल्लाहों के जीवन-संघर्ष पर केन्द्रित है।

मीरा कांत की कहानियाँ 'रूपोश', 'काली बर्फ' एवं 'स्मृति पिंड' कश्मीरी स्त्री की समस्याओं,

आतंक से उपजी पीड़ा, दहशत एवं विस्थापन पर केन्द्रित हैं। 'रूपोश' एवं 'काली बर्फ' कहानियाँ सन् 1998 में प्रकाशित 'हाइफ़न' कहानी संग्रह तथा 'स्मृति पिंड' कहानी सन् 2008 में प्रकाशित 'कागज़ी बुर्ज' कहानी संग्रह में प्रकाशित है।

मधु कांकरिया का कहानी संग्रह 'युद्ध और बुद्ध' सन् 2014 में प्रकाशित है। इस संग्रह की कहानियाँ 'युद्ध और बुद्ध' एवं 'काला चश्मा' कश्मीर में सैनिक के जीवन की समस्याओं, जटिलताओं और उनकी मन:स्थिति एवं अंतर्द्वंद को केंद्र में रखकर लिखी गई हैं।

क्षमा कौल का कहानी संग्रह 'उन्नीस जनवरी के बाद' सन् 2021 में प्रकाशित है। इस संग्रह में कुल नौ कहानियाँ हैं- 'पूर्वलोक', 'मानवाधिकार', 'गहरे कत्थई रंग का मखमली फिरन', 'डरे हुए लोग', 'न्यूज़ लेटर', 'वबा', 'जोजीला', 'गर्भ गृह' और 'उन्नीस जनवरी के बाद'। 'पूर्वलोक' कहानी में जहाँ एक ओर कैम्प में रहते विस्थापितों की दयनीय स्थिति का चित्रण किया गया है वहीं दूसरी ओर प्रद्युम्न, जो विस्थापित कश्मीरी पंडित है, के माध्यम से दुबारा कश्मीर लौटे पंडितों की पीड़ा का चित्रण है। 'मानवाधिकार' कहानी में मानवाधिकारों के नाम पर आतंक को बढ़ावा देने की नीति पर प्रश्न उठाया गया है। 'गहरे कत्थई रंग का मखमली फिरन' में जहाँ कश्मीर में पंडितों को मिलनेवाली धमकियों का चित्रण किया गया है वहीं स्त्रियों के साथ होनेवाले दोहरे शोषण को भी दिखाया गया है। 'गर्भ गृह' कहानी में उस यातना का चित्रण किया गया है जो एक विस्थापित पात्र की कश्मीर वापसी एक पर्यटक के रूप में होने से उत्पन्न हुई थी। 'वबा' कहानी में कश्मीर में बिगड़ती परिस्थितियों का चित्रण किया गया है। 'उन्नीस जनवरी के बाद' कहानी में कश्मीरी-पंडितों और मुसलमानों के संबंधों में होते बदलाव, विश्वासघात, पंडितों के साथ हुई हिंसा, उनका विस्थापन और कैंपों में उनकी दयनीय स्थिति का चित्रण किया गया है।

महाराज कृष्ण संतोषी का कहानी संग्रह 'हमारे ईश्वर को तैरना नहीं आता' सन् 2009 में प्रकाशित है। इस संग्रह में कुल 13 कहानियाँ हैं। जिनमें से 'हमारे ईश्वर को तैरना नहीं आता',

'घर देवता', 'कहने वाला कहता है', 'अपहरण', 'बिच्छू-घास', 'अकनंदुन', 'आयेंगे हम लौटकर ऐ वतन', 'घर वापसी', 'कोख', 'लड़ाई', 'अस्थियों का सौदा' और 'आंच' कश्मीर केन्द्रित कहानियाँ हैं। 'हमारे ईश्वर को तैरना नहीं आता' कहानी में कथानायक कश्मीर छोड़ने से पूर्व अपने ईश्वर की मूर्तियों को दरिया में फेंक देता है और वे डूब जाती हैं। मूर्तियों को डूबते देख वह ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगता है-हमारे ईश्वर को तैरना नहीं आता। ईश्वर को दरिया में फेंक देने का प्रसंग कश्मीरी पंडितों की उस बेबसी को दिखाता है जहाँ वे महसूस करने लगे थे कि न उनका ईश्वर उन्हें बचा सकता है और न वे अपने ईश्वर को बचा सकते हैं। 'घर देवता' कहानी अपने गृह देवता के प्रति पंडितों की अटूट आस्था और कश्मीरियों के साझे संबंधों पर आधारित है। 'बिच्छू-घास' कहानी का शीर्षक प्रतीकात्मक है। इस कहानी की एक स्त्री पात्र यह सपना देखती है कि उसके बगीचे के सभी पेड़-पौधे 'बिच्छु-घास' में बदल गए हैं। यह बदलाव कश्मीर की उन स्थितियों की ओर संकेत करता है जहाँ जीवन की सहजता मृत्यु-भय में बदलने लगी है। 'अकनंदुन' कहानी में कश्मीरी में प्रचलित लोककथा को केंद्र में रखकर आतंक का चित्रण का चित्रण किया गया है। 'घर वापसी' कहानी में एक विस्थापित कश्मीरी की कश्मीर में चुनाव संबंधी ड्यूटी लगने पर हुई वापसी, उस वापसी के निर्णय को लेकर उसके कश्मकश और कश्मीर में हर पल महसूस किए जानेवाले उसके भय का चित्रण है। 'कोख' कहानी में उन कश्मीरी मुसलमान स्त्रियों की पीड़ा का मार्मिक चित्रण किया गया है जिनके बच्चे आतंक की भेंट चढ़ गए हैं। 'अस्थियों का सौदा' कहानी में बोन्यमाल के माध्यम से घर के प्रति पंडितों के लगाव का चित्रण किया गया है। बोन्यमाल के कश्मीर के पुश्तैनी घर को उसका बेटा उसे बिना बिताए बेच देता है। उन पैसों से वह बोन्यमाल की रेलयात्रा की इच्छा पूरी करना चाहता है, लेकिन जब बोन्यमाल को इस बात की जानकारी होती है तो उसे ऐसा लगता है जैसे उसका बेटा उसकी अधूरी इच्छा को उसके पति की अस्थियों का सौदा करके पूरा कर रहा है। 'कहने वाला कहता है', अपहरण', 'लड़ाई' और 'आंच' कहानियों में भी कश्मीर में फैलती हिंसा, आतंक, संशय

और बची उम्मीद का ही चित्रण किया गया है।

कश्मीर पर चन्द्रकान्ता ने सर्वाधिक कहानियाँ लिखी हैं। चन्द्रकान्ता के कहानी संग्रहों के साथ ही 'चन्द्रकान्ता की लोकप्रिय कहानियाँ', 'चन्द्रकान्ता: चुनी हुई कहानियाँ', 'चन्द्रकान्ता की यादगार कहानियाँ' जैसे संपादित कहानी संग्रह भी प्रकाशित हैं। चन्द्रकान्ता की कई कहानियाँ एक से अधिक कहानी संग्रहों में प्रकाशित हुई हैं। सन् 1988 में प्रकाशित 'पोशनूल की वापसी' कहानी संग्रह की कहानी 'पोशनूल की वापसी' कश्मीरी पंडितों और मुसलमानों को केंद्र में रखकर लिखी गई है वहीं 'आउटसाइडर' कहानी कश्मीरियों की आर्थिक समस्याओं पर आधारित है।

सन् 1993 में प्रकाशित 'कोठे पर कागा' कहानी संग्रह की कहानियाँ 'किस्सा गाश कौल' और 'करिश्मा कैसेट' आतंकवाद एवं शरणार्थी शिविर में विस्थापितों की स्थिति पर केन्द्रित हैं।

सन् 1994 में प्रकाशित 'सूरज उगने तक' कहानी संग्रह की कहानियाँ 'कित्थे जाना पुत्तर' और 'रहमते बारान' भी आतंकवाद, हिंसा और कश्मीर में बनते भय के माहौल पर आधारित हैं।

सन् 1996 में प्रकाशित 'काली बर्फ' संग्रह की कहानियाँ 'शरणागत दीनार्त' और 'काली बर्फ' जहाँ आतंकवाद से प्रभावित होते जीवन पर केन्द्रित हैं वहीं 'नवशीन मुबारक' कहानी कश्मीरियों के आपसी संबंधों पर आधारित है।

सन् 2002 में प्रकाशित 'बदलते हालत में' कहानी संग्रह की कहानी 'बदलते हालात' विस्थापनजनित पीड़ा और त्रासदी पर केन्द्रित है। 'आवाज़' कहानी बलात्कार की समस्या को उजागर करती है। इस संग्रह की अन्य कहानियाँ जैसे 'फांस', 'अंतिम अपराध' और 'कहीं कुछ शेष' कश्मीरी पंडितों के साथ होती हिंसा का यथार्थ चित्रण करती हैं।

सन् 2005 में प्रकाशित 'अब्बू ने कहा था' संग्रह की कहानी 'जलकुण्ड का रंग और नुसरत की आँखे' में आतंकवाद का चित्रण किया गया है। 'शायद संवाद' और 'लाजवाब' कहानी में

निर्वासन की पीड़ा को दिखाया गया है। वहीं 'अब्बू ने कहा था' कहानी हिंसा और आतंकवाद के बावजूद भी कश्मीरी पंडितों और मुसलमानों के बीच अवशिष्ट संबंधों पर केन्द्रित है।

सन् 2006 में प्रकाशित 'तैतींबाई' संग्रह की कहानी 'पायथन' में स्त्रियों की उस स्थिति का चित्रण किया गया है जहाँ वे न कश्मीर में सुरक्षित है और न कैंप में। वे हर जगह और हर किसी के लिए केवल भोग की वस्तु है।'कहीं कुछ शेष है' कहानी में साम्प्रदायिक तनाव और उसके कारण आपसी संबंधों में बढ़ती दूरियों का चित्रण किया गया है।

सन् 2013 में प्रकाशित 'अलकटराज देखा है' कहानी संग्रह की कहानियाँ 'दिशा' और 'रक्षक' जहाँ कश्मीरी पंडितों के विस्थापन पर केन्द्रित हैं वहीं 'एक ही झील' में आतंकवाद की समस्या को केंद्र में रखा गया है।

सन् 2018 में प्रकाशित 'कथानगर' कहानी संग्रह की कहानी 'शाहे चिनार की छाया में दौड़' में आतंकजनित परिस्थितियों के कारण जीवन में होनेवाले बदलावों का चित्रण किया गया है। 'सफ़ेद कब्रिस्तान' कहानी में स्त्रियों की विवशता के साथ ही राजौरी और पूंछ क्षेत्र का भी चित्रण किया है। 'रामबिल्ले की दस्तक' कहानी में कश्मीरी जीवन, उसके त्यौहार और उनमें होते बदलाव का चित्रण है। 'यह तो मेरा कश्मीर नहीं', रहमते बारान' कहानियाँ कश्मीर में आतंकजनित परिस्थितियों पर केन्द्रित है।

कश्मीर केन्द्रित कहानियाँ उस छटपटाहट का चित्रण करती हैं जो सभी पात्रों के मन में है। फिर चाहे वह कश्मीर में हो या कश्मीर से बाहर। इन पात्रों के नाम भले अलग-अलग हो लेकिन उनकी पीड़ा लगभग समान है। ये कहानियाँ कश्मीरी जीवन, उसमें हुए बदलाव, आतंकवाद, उससे प्रभावित होते संबंध, स्त्रियों का शोषण, निर्वासन और कैम्प जीवन की त्रासदी के साथ ही कश्मीरी पंडितों के वापसी की उम्मीद और उस उम्मीद के टूटने का चित्रण करती हैं। साथ ही उन कश्मीरियों को आवाज़ बनती हैं जिनका जीवन आतंक और निर्वासन की भेंट चढ़ गया है।

संदर्भ:

1. फॉक्स, रैल्फ (1957), उपन्यास और लोक-जीवन (अनुवाद. नरोत्तम नागर), पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड, नई दिल्ली, पृष्ठ 2

2. तिवारी, डॉ. रामचन्द्र (2016), हिन्दी का गद्य-साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ 183

3. मदान, इन्द्रनाथ (1960), उपन्यासकार अश्क, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ 264

4. राजपाल, डॉ. हुकुमचन्द, सिंह, डॉ. पुष्पपाल (1992), मानवतावादी उपन्यासकार मनमोहन सहगल, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ 163-164

5. https://archive.org/details/DuniyaSabki-Hindi/mode/1up

6. राय, गोपाल (2016), हिंदी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 377

7. चन्द्रकान्ता (1984), ऐलान गली ज़िन्दा है, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 101

8. वही, पृष्ठ 12

9. वही, पृष्ठ vii

10. वही, पृष्ठ 12

11. तिवारी, डॉ. रामचन्द्र (2016), हिन्दी का गद्य-साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ 328

12. जोशी, ज्योतिष (2016), उपन्यास की समकालीनता, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पृष्ठ, 117

13. राजपाल, डॉ. हुकुमचन्द, सिंह, डॉ. पुष्पपाल (1992), मानवतावादी उपन्यासकार मनमोहन सहगल, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ 253

14. राय, गोपाल (2016), हिंदी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ

377

15. चन्द्रकान्ता (2008), मेरे भोजपत्र, अरु प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 42

16. सहगल, मनमोहन (1996), घटता-बढ़ता चाँद, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, प्रस्तुत है से

17. चन्द्रकान्ता (2002), कथा सतीसर, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ ix

18. जोनराज, राजतरंगिणी (1972) (अनुवाद. डॉ. रघुनाथ सिंह) चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, वाराणसी, पृष्ठ 186

19. तिवारी, डॉ. रामचन्द्र (2016), हिन्दी का गद्य-साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ 349

20. कौल, क्षमा (2004), दर्दपुर, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पृष्ठ 115

21. सिंह, पुष्पपाल (2015), 21वीं शती का हिंदी उपन्यास, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ 108

22. कांत, मीरा (2009), एक कोई था कहीं नहीं-सा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 38

23. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2010), शिगाफ़, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 89

24. भारद्वाज, नंद (अप्रैल-जून 2013) आलोचना पत्रिका, पृष्ठ 98

25. कुलश्रेष्ठ, मनीषा (2010), शिगाफ़, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 228

26. तिवारी, डॉ. रामचन्द्र (2016), हिन्दी का गद्य-साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ 353

27. कांकरिया, मधु (2012), सूखते चिनार, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पृष्ठ 8

28. वही, पृष्ठ 51

29. वही, पृष्ठ 133

30. जोशी, ज्योतिष (2019), कथा विचार, विजया बुक्स, दिल्ली, पृष्ठ 80

31. राय, जयश्री (2014), इक़बाल, आधार प्रकाशन, हरियाणा, पृष्ठ 77

32. वही, पृष्ठ 77

33. तनेजा, जयदेव (1998) (सं.), मोहन राकेश एकत्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 286

34. कौल, क्षमा (2021), मूर्तिभंजन, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 37

35. चन्द्रकान्ता (2022), समय-अश्व बेलगाम, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, फ्लैप से

36. पाण्डेय मैनेजर (2013), उपन्यास और लोकतंत्र, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 14

37. चन्द्रकान्ता (2008), मेरे भोजपत्र, अरु प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 57